राजस्थान में पशु सम्पदा का मूल्यांकन

*डॉ. विक्रम सिंह

पशु सम्पदा

राजस्थान की अर्थव्यस्था में कृषि एवं पशुपालन दोनों ही महत्व रखते हैं। जिसका प्रमुख कारण राजस्थान के अधिकांश भू–भाग का शुष्क व रेतीला होना है। इसी कारण राज्य के शुष्क एवं अर्द्धशुष्क भागों में वहां की अधिकतर जनसंख्या के लिए पशुपालन एक मुख्य धन्धा है तथा कृषि व पशुपालन एक ही सिक्के के दो पहलु माने गए हैं।

लघु एवं सीमान्त काश्तकार कृषि श्रमिकों एवं अन्य ग्रामीण निर्धन लोगों की बहुत बड़ी संख्या लाभप्रद रोजगार हेतु पशुधन पर आधारित हैं तथा कहा जाता है कि पशु सम्पदा के बिना खेत बिना जुते रह जाते हैं, खलिहान खाद्यान्नों के अभाव में खाली पड़े रहते हैं तथा इससे दुखदायी बात क्या हो सकती है कि यहां पशुओं के अभाव में घी, दूध, मक्खन, पनीर एवं अन्य पशु उत्पादों आदि पौष्टिक पदार्थों की प्राप्ति का ही अकाल पड़ सकता है जिसके परिणामस्वरूप मानव समुदाय का स्वास्थ्य खराब रहता है तथा विभिन्न प्रकार की बीमारियों को बढ़ावा मिलता है।

अतः स्पष्ट है कि पशुपालन की तरफ अधिक से अधिक ध्यान देना चाहिए तथा इनके विकास के लिए नस्ल सुधार तथा चारे के प्रति समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।

राजस्थान राज्य जलवायु की दृष्टि से शुष्क व अर्द्धशुष्क प्रदेश के अन्तर्गत आता है जिसका पश्चिमी भाग रेतीला है जिसमें राज्य के 12 जिलों की 60 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है, जिनकी उदर पूर्ति का अधिकांश हिस्सा पशुपालन पर निर्भर है। सन् 2002–03 के बजट में पशुपालन के लिए 16 करोड़ 23 लाख रुपये का प्रावधान किया गया।

पशु सम्पदा का महत्व

राजस्थान राज्य कृषि प्रधान होने के कारण यहां पर पशु सम्पदा का अत्यधिक महत्व माना जाता है जो कि निम्न प्रकार से है –

1. कृषि कार्यों में सहायता के लिए, हल खीचने, गन्ने की चरखियां फेरने, कुओं से पानी खींचने और बोझा ढ़ोने के लिए बैलों तथा पशुओं का उपयोग होता है।
2. पशुओं से खेतों के लिए गोबर खाद तथा हड्डी व खून की खाद के मिश्रण से ही भूमि की उर्वरकता को बढ़ावा मिलता है।
3. पशुओं से चमड़ा व खालें प्राप्त होती हैं।
4. भेड़ों से ऊन प्राप्त की जाती है। प्रदेश में सर्वाधिक 40 प्रतिशत ऊन का उत्पादन होता है।

5. पशुओं से पौष्टिक पदार्थ दूध, पनीर, मक्खन, घी, खोया आदि प्राप्त होता है।
6. राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पादन का 19 प्रतिशत से भी अधिक भाग पशु सम्पदा से प्राप्त होता है तथा देश की कुल पशुधन शक्ति में से 35 प्रतिशत भाग राजस्थान राज्य में उपलब्ध है।
7. राजस्थान राज्य में देश के कुल दुग्ध उत्पादन का अंश लगभग 11.20 प्रतिशत है
8. वर्तमान में राजस्थान राज्य में भेड़ों की संख्या भारत की संख्या का 25 प्रतिशत है।

पशुधन संरचना

राजस्थान के लिए पशु सम्पदा का विशेष रूप से आर्थिक महत्व माना गया है क्योंकि राज्य के 61 प्रतिशत मरूस्थलीय जिला क्षेत्रों में जीविकोपार्जन का प्रमुख साधन पशुपालन ही है। पशुओं की संख्या पर सूखे एवं अकाल का विपरीत प्रभाव पड़ता है, जिस प्रकार 1987–88 के भंयकर सूखे व अकाल के कारण 1983–88 की अवधि में पशुओं की संख्या लगभग 88 लाख घट गई थी। 1992 की संगणना के अनुसार पशुओं की संख्या 4.78 करोड़ आंकी गई जो 1997 में बढ़कर 5.43 करोड़ हो गई। 1987–88 का सूखा सबसे अधिक भीषण रहा है जिसके परिणामस्वरूप इस अवधि में गौवंश के पशुओं की संख्या 19.2 प्रतिशत, बकरियों की संख्या 18.7 प्रतिशत तथा भेड़ों की संख्या में 26.2 प्रतिशत की भारी गिरावट रही थी, इसी अवधि में ऊँटों की संख्या में 4.6 प्रतिशत की कमी आई लेकिन भैंस जाति की संख्या में 4.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अतः कुल मिलाकर 1983 में पशुओं की संख्या 4.97 करोड़ से घटकर 1988 में 4.09 करोड़ रह गई, इस प्रकार संख्या की दृष्टि से पशुओं में गाय, बैल तथा भेड़बकरी व भैंस जाति के पशुओं का स्थान काफी ऊँचा है।

राजस्थान में पशुओं की संख्या में बाड़मेर जिला प्रथम स्थान रखता है। वर्ष 1997 में कुल पशु सम्पदा का 50 प्रतिशत राज्य के नौ जिलों में रहा – बाड़मेर (7.68 प्रतिशत), जोधपुर (6.97 प्रतिशत), नागौर (5.93 प्रतिशत), पाली (5.03 प्रतिशत), भीलवाड़ा (4.98 प्रतिशत), उदयपुर (4.67 प्रतिशत), बीकानेर (4.65 प्रतिशत), जैसलमेर (4.55 प्रतिशत) तथा जयपुर (4.27 प्रतिशत) ।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजस्थान में पशुसंख्या जनसंख्या से अधिक है क्योंकि 1981 की जनगणना के अनुसार राज्य में 1000 मनुष्यों के पीछे 1554 पशुधन था, इसी प्रकार वर्ष 2003 की पशुगणना को देखने से पता चलता है कि वर्ष 1951 की तुलना में वर्ष 2003 में पशुधन की संख्या में 1.92 गुना की वृद्धि हुई जबकि दूसरी ओर वर्ष 1997 और 2003 के आंकड़ों से ज्ञात होता है कि 2003 में पशुधन में कमी हुई है

अतः अकाल के कारण पशुधन की संख्या में भी कमी आई है।

पशुधन का क्षेत्रीय वितरण

क्षेत्र की बाहरी सीमाओं पर स्थित है तथा जहां पर कृषि करना सम्भव नहीं है। राजस्थान में पशुधन के वितरण में मिट्टी की प्रकृति, तापक्रम एवं वर्षा महत्वपूर्ण कारक है, इन्हीं के आधार पर राजस्थान को दो पशु प्रदेशों में विभक्त किया है।

उत्तरी पश्चिमी भाग

राजस्थान राज्य के आधे से अधिक क्षेत्र अरावली के उत्तरी–पश्चिमी भाग में विस्तृत हैं जहां भूमि रेतीली, पानी का विषम वितरण एवं कमी तथा ऊँचे तापक्रम पाए जाते हैं तथा वर्षा का असमान वितरण पाया जाता है। इस भाग में

मरूस्थल समानान्तर बालू की पहाड़ियों से परिलक्षित होता है। वर्षा ऋतु में बौनी आदिमों और घास के उग आए गुच्छे पशुधन के लिए मुख्य भोजन है इस प्रकार के क्षेत्रों में राजस्थान में उत्तम चौपाए, भेड़ बकरियां और ऊँट पाए जाते हैं, साथ ही अरावली से सटे अर्द्धशुष्क भाग में उत्तम घोड़े जो मालानी अथवा मारवाड़ी के नाम से जाने जाते हैं।

इस क्षेत्र में प्रसिद्ध राठी (तीन चौथाई साहीवाल) नस्ल की गाये पाली जाती है; थारपारकर नस्ल की गायें, स्करेज (सांचोर) गायें तथा भेड़ क्षेत्र बीकानेर, जैसलमेरी, मारवाड़ी, प्रसिद्ध हैं, साथ ही पूंगल भेड़ें ऊन की उत्तम किस्म के लिए प्रसिद्ध हैं ऊँट पालन में राज्य का एकाधिकार है, ऊँट की दो मुख्य नस्ल जैसलमेरी, बीकानेरी प्रसिद्ध हैं। इस क्षेत्र में लोही और मारवाड़ी नस्ल की बकरियां पाली जाती हैं।

2. दक्षिणी–पूर्वी भाग

दक्षिणी–पूर्वी भाग राजस्थान में अरावली के पूर्व और दक्षिण में विस्तृत है जहां तक उच्चावच, तापक्रम, वर्षा, मिट्टी और वनस्पति दशाओं का प्रश्न है यह विभाग अधिक विविधताएं रखता है, यहां वार्षिक वर्षा 100 सेन्टीमीटर के आसपास है, इस क्षेत्र के अन्तर्गत राज्य की दो तिहाई जनसंख्या रहती है। चौपायों की दो बहुउददेशीय नस्लें जैसे हरियाणवी, मेवाती और रथ मारवाड़ी नस्लें जैसे मालवी, शुद्ध दुधारू नस्ल जैसे थारपारकर और गिर आदि सामान्य रूप से पाई जाती हैं, इनके लिए निभिन्न प्रकार की घासे जैसे अंजन खावल, और चिम्बर आदि इस क्षेत्र में मिलती हैं। बकरियों की जमनापुरी, बारबारी, सिरोही आदि प्रजातियां इस क्षेत्र में मिलती हैं। भेंड़ों में चौखला, मालपुरा और सोनाड़ी नस्लें मुख्य रूप से यहा पाई जाती हैं। नदी बेसिनों की उपस्थिति, मैदानी भागों एवं पहाड़ी और पठारी ढ़ालों पर वर्ष भर चारे की उपलब्धि के फलस्वरूप दुधारू पशु अधिक पाले जाते हैं।

राज्य में पशु सम्पदा का क्षेत्रीय वितरण

राजस्थान में पशु की अनेक प्रकार की किस्में पाई जाती हैं जो कि अपनी अलग–अलग विशेषताएं लिए हुए हैं। राज्य में गौवंश की सात विशिष्ठ नस्लें, भेड़ों की प्रतिष्ठित आठ नस्लें, बकरियों की छः प्रतिष्ठित नस्लें और ऊँटों की चार नस्लें पाई जाती हैं इसके अलावा मालानी नस्ल के घोड़ें भी राज्य में पाए जाते हैं जो कि देश भर में प्रसिद्ध हैं। राज्य में पशुपालन का प्रमुख क्षेत्र पश्चिमी शुष्क क्षेत्र में पाया जाता है क्योंकि वहां पर वर्षा की मात्रा अपर्याप्त है अतः कृषि का होना एक मुश्किल भरा काम माना जाता है इस शुष्क जलवायु क्षेत्र में कई स्थानों पर पौष्टिक घास (सेवण घास) के मैदान पाए जाते हैं जिनमें बड़े पैमाने पर पशु चारण की सुविधा मौजूद है। राज्य में घुमक्कड़ पशुचालक भी काफी संख्या में मौजूद हैं जो कि पशुओं को चराने हेतु समय व परिस्थिति के साथ स्थान बदलते रहते हैं, इसके विपरीत जहां पर सिंचाई, वर्षा व पानी के साथ–साथ आजीविका के सुलभ साधन मौजूद हैं वहां पशुपालन कुछ संख्या में है।

पशुधन का निष्क्रमण

गर्मियों में अल्प क्षेत्र में चरवाहे चले जाते हैं तथा सर्दियों में मैदानों का दक्षिणी यूरोपीय पशुधन का निष्क्रमण हर काल, देश और समय पर होता आ रहा है। यूरोप में भागों में आ जाते हैं। भारत में भी हिमालय के चरवाहे अपने पशुओं, भेड़–बकरियों को गर्मी में रोहतांग, जोजीला, शिपकी, कारगिल, बद्रीनाथ आदि दर्रों या क्षेत्रों तक ले जाते है तथा सर्दियों में मैदानी या कम ऊँचाई वाले भागों में आ जाते हैं।

राजस्थान में आज भी पश्चिमी राजस्थान के चरवाहे चारागाहों की खोज में अकाल, सूखा, अपर्याप्त चारे की स्थिति में हर वर्ष अपने निवास से उक्त चरागाहों की ओर निश्चित मार्ग से होते हुए जाते हैं तथा वर्षा होने पर पुनः लौट

आते है। कई चरवाहे तो कई सालों तक बाहर ही रहकर अपने पशुओं का पालन करते हैं। प्रायः इनका प्रवास एवं स्थानान्तरण सामयिक एवं निश्चित अवधि का होता है, ये लोग खरीफ की फसल के कटने का समय आते ही प्रवास पर चल देते हैं तथा वर्षा के आगमन पर पुनः लौटकर घर आ जाते हैं। यह स्थानान्तरण प्रायः जिन मार्गों से होता हैं उन्हें तालिका संख्या 3.15 में प्रदर्शित किया गया है।

***व्याख्याता**
भूगोल विभाग ,
एस.एस.एस. पी.जी. कॉलेज
जमवारामगढ़, जयपुर (राज.)

संदर्भ सूची

1. बैडकर, वी. के. एण्ड बनर्जी ए.के. (1969) : क्लाइमेटोलोजीकल एण्ड रेनफाल पेटर्न अवर सेन्ट्रल इण्डियन जरनल ऑफ मेट्रोलोजी एण्ड ज्योफिजिक्स, 20, 23
2. बिरनोई, ओ.पी. (1975) : ए स्टडी ऑफ रिलाइबीलिटी, डेफिसिएन्सी एण्ड एक्सेस ऑफ रेनफॉल ओवर दि हरियाणा स्टेट, इण्डियन जरनल ऑफ मेट्रोलोजी, हाइड्रोलॉजी एण्ड ज्योफिजिक्स, 26 (2), 211–214
3. बिरनोई, ए.पी. (1970) इफैक्टिव रेनफाल इन हरियाणा, अन्नाल्स ऑफ एरिड जॉन, 14 (2)
4. भागन्सी, के. भट्टाचार्य, आर (1969) : ड्राउट इन्सीडेन्स इन रूरल प्लेटियम, वेस्ट बंगाल, ज्योलोजिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया ब्यूमिन स्टोक, डी.आई. (1942) : ड्राउट इन दा यू.एस. एनालाइस्ड वाई मीन्स ऑफ दा थ्योरी ऑफ प्रोबेविल्टी, यू.एस.डी.ए. टैक्नीकल बुलेटिन, 819
5. बिस्वास, एम.आर.; बिस्वास, ए.के. (1982) : डेजर्टीफिकेशन, परग्मन प्रेस, न्यूयार्क
6. बुडीको, एम.आई. (1974) : क्लाइमेट एण्ड लाइफ, डी.एच. मिलर, प्रेस, न्यूयार्क, लन्दन ।
7. भल्ला, एस.आर रू राजस्थान का भूगोल, पृष्ठ 11–68
8. चटर्जी, एस.पी. (1966) : प्रोग्रेस इन क्लाइमेटोलॉजी इन इण्डिया, टोक्यो जनरल ऑफ क्लाइमेटोलॉजी 30–35
9. चौधरी, के.आर. (1970) : कन्सेप्ट्स, एप्रोचेज एण्ड ए मेथडॉलौजी फार डिलिमिटेशन ऑफ सब एरियाज इन ड्राट प्रॉन एरियाज, प्रॉसीडिंग्स ऑफ ऑल इण्डिया सिम्पोजियम ऑन ड्राट प्रॉन एरियाज ऑफ इण्डिया, तिरुपति
10. चौहान, टी.एस. (1978) : ए ज्योलॉजीकल स्टेडी ऑफ दा इम्पेक्ट ऑफ ड्रॉउट एण्ड रिलीफ इन दा मलानी रीजन, राजस्थान, जोधपुर विश्वविद्यालय (अनपब्लिशड)